श्रीमद् भागवत का यह सार
भगवद् भक्ति ही आधार

श्रीमद्भागवत रसिक कुटुंब

वेणु गीत भागवत मुखस्थ परीक्षा हेतु

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

दशमः स्कन्धः

॥ अथैकविंशोऽध्यायः ॥

गोप्य ऊचुः

अक्षण्वतां(म्) फलमिदं(न्) न परं(वँ) विदामः(स्),

सख्यः(फ्) पशूननु विवेशयतोर्वयस्यैः ।

वक्त्रं(वँ) व्रजेशसुतयोरनुवेणु जुष्टं(यँ),

यैर्वा निपीतमनुरक्तकटाक्षमोक्षम् ॥ 1॥

श्री-गोप्यः ऊचुः– गोपियों ने कहा; अक्षण्वताम्— आँखवालों को; फलम्— फल; इदम्– यह; न– नहीं; परम्— अन्य; विदामः- हम जानती हैं; सख्यः- हे सखियो; पशून्– गौवों को; अनुविवेशयतोः- एक जंगल से दूसरे जंगल में प्रवेश कराकर; वयस्यैः–हमउम्र सखाओं के साथ; वक्त्रम्- मुख; व्रज-ईश- महाराज नन्द के; सुतयोः- दोनों पुत्रों के; अनु-वेणु-जुष्टम् – वंशी से लैस; यैः– जिससे; वा– अथवा; निपीतम्– प्रेरित; अनुरक्त- प्रेममय; कट-अक्ष - तिरछी दृष्टि, चितवन; मोक्षम्— छोड़ते हुए ।

गोपियाँ आपस में बात चीत करने लगी- अरी सखी। हमने तो आँखोंवाले के जीवन की और उनकी आँखो की बस, यही इतनी ही सफलता समझी है; और तो हमें कुछ मालूम ही नहीं है। वह कौन-सा लाभ है ? वह यही है कि जब श्याम सुन्दर श्रीकृष्ण और गौरसुन्दर बलराम ग्वालबालों के साथ गायों को हाँक कर वन में ले जा रहे हों या लौटा कर जला रहे हों, उन्होंने अपने अधरों पर मुरली धर रखी हो और प्रेम भरी तिरछी चित वन से हमारी ओर देख रहे हों, उस समय हम उनकी मुख-माधुरी का पान करती रहीं।

चूतप्रवालबर्हस्तबकोत्पलाब्ज-

मालानुपृक्तपरिधानविचित्रवेषौ ।

मध्ये विरेजतुरलं(म्) पशुपालगोष्ठ्यां(म्),

रं(ङ्)गे यथा नटवरौ क्व च गायमानौ ॥ 2॥

चूत— आम का वृक्ष; प्रवाल- कोंपलों से युक्त; बर्ह– मोरपंख; स्तबक- फूल के गुच्छे; उत्पल- कमल; अब्ज - तथा कुमुदिनियाँ; माला– मालाओं से; अनुपूक्त- स्पर्श किया हुआ; परिधान— उनके वस्त्र; विचित्र— तरह तरह के; वेशौ- वेश में; मध्ये– बीच में; विरेजतुः- वे दोनों सुशोभित थे; अलम्- शान से; पशु-पाल- ग्वालबालों की; गोष्ठ्याम्– गोष्ठी के भीतर; रङ्गे–रंगमंच पर; यथा- जिस तरह; नट- वरौ- दो श्रेष्ठ नर्तक; क्व च- कभी; गायमानौ- गाते हुए ।

अरी सखी जब वे आमकी नयी कोंपलें, मोरों के पंख, फूलों के गुच्छे, रंग-बिरंगे कमल और कुमुद की मालाएं धारण कर लेते हैं, श्रीकृष्ण के साँवरे शरीर पर पीताम्बर और बलराम के गोरे शरीर पर नीलाम्बर फहराने लगता है, तब उनका वेष बड़ा ही विचित्र बन जाता है। ग्वालबालों की गोष्ठीमें वे दोनों बीचो बीच बैठ जाते हैं और मधुर सङ्गीत को तान छेड़ देते हैं। मेरी प्यारी सखी! उस समय ऐसा जान पड़ता है मानो दो चतुर नट रंगमञ्च पर अभिनय कर रहे हों। मैं क्या बताऊँ कि उस समय उनकी कितनी शोभा होती है।

गोप्यः(ख्) किमाचरदयं(ङ्) कुशलं(म्) स्म वेणुर्-

दामोदराधरसुधामपि गोपिकानाम् ।

भुङ्क्ते स्वयं(यँ) यदवशिष्टरसं(म्) ह्रदिन्यो,

ह्रष्यत्त्वचोऽश्रुमुमुचुस्तरवो यथाऽऽर्याः ॥ 3॥

गोप्यः– हे गोपियो; किम्– क्या; आचरत्— कर डाला; अयम्– यह; कुशलम्— शुभ कृत्य; स्म– निश्चय ही; वेणुः- बाँसुरी; दामोदर– कृष्ण की; अधर-सुधाम् – होंठ का अमृत; अपि– भी; गोपिकानाम्– गोपियों का; भुङ्क्ते– भोग करता है; स्वयम्— स्वतंत्र रूप से; यत्- जिसके लिए; अवशिष्ट- बचा हुआ; रसम्- केवल स्वाद; ह्रदिन्यः– नदियाँ; ह्रष्यत्– प्रसन्न होते हुए; त्वचः– जिनके शरीर; अश्रु– आँसू; मुमुचुः– गिरे; तरवः– वृक्ष; यथा– जिस तरह; आर्याः– बाप-दादे ।

अरी गोपियो यह वेणु पुरुष जाति का होने पर भी पूर्वजन्म में न जाने ऐसा कौन-सा साधन-भजन कर चुका है कि हम गोपियों की अपनी सम्पत्ति दामोदर के अधरों की सुधा स्वयं ही इस प्रकार पिये जा रहा है कि हम लोगों के लिये थोड़ा-सा भी रस शेष नहीं रहेगा। इस वेणु को अपने रस से सींचने वाली ह्रदिनियाँ आज कमलों के मिस रोमाञ्चित हो रही है और अपने वंश में भगवत्प्रेमी सन्तानो को देख कर श्रेष्ठ पुरुषों के समान वृक्ष भी इसके साथ अपना सम्बन्ध जोड़ कर आँखों से आनन्दाश्रु बहा रहे हैं।

वृन्दावनं(म्) सखि भुवो वितनोति कीर्तिं(यँ),

यद् देवकीसुतपदाम्बुजलब्धलक्ष्मि ।

गोविन्दवेणुमनु मत्तमयूरनृत्यं(म्),

प्रेक्ष्याद्रिसान्वपरतान्यसमस्तसत्त्वम् ॥ 4॥

वृन्दावनम्—वृन्दावन; सखि- हे सखी; भुवः– पृथ्वी पर; वितनोति- फैलाता है; कीर्तिम्- यश को; यत्- क्योंकि; देवकी-सुत- देवकी- पुत्र के; पद-अम्बुज- चरणकमलों से; लब्ध– प्राप्त; लक्ष्मि– कोष; गोविन्द–वेणुम्- गोविन्द की वंशी; अनु– सुनने पर; मत्त– उम्मत्त; मयूर– मोरों का; नृत्यम्- जिसमें नृत्य होता है; प्रेक्ष्य– देखकर; अद्रि-सानु- पर्वतों की चोटियों पर; अवरत- स्तम्भित; अन्य- दूसरे; समस्त- सभी; सत्त्वम् - प्राणी

धन्याः(स्) स्म मूढमतयोऽपि हरिण्य एता,

या नन्दनन्दनमुपात्तविचित्रवेषम् ।

आकर्ण्य वेणुरणितं(म्) सहकृष्णसाराः(फ्),

पूजां(न्) दधुर्विरचितां(म्) प्रणयावलोकैः ॥ 5॥

धन्याः– धन्य; स्म– निश्चय ही; मूढ-गतयः- अज्ञानी पशु योनि में जन्म लेकर; अपि- यद्यपि; हरिण्यः- हिरणी; एताः- ये; याः-जो; नन्द-नन्दनम्- महाराज नन्द के पुत्र को; उपात्त-विचित्र-वेशम्– अत्यन्त आकर्षक वस्त्र पहने; आकर्ण्य– सुनकर; वेणु-रणितम्— उनकी वंशी की ध्वनि; सह-कृष्ण-साराः– कृष्ण हिरणों के साथ; पूजाम् दधुः- पूजा की; विरचिताम्— सम्पन्न किया; प्रणय-अवलोकैः- अपनी प्रेमपूर्ण चितवनों से।

अरी सखी यह वृन्दावन वैकुण्ठ लोक तक पृथ्वी को कीर्ति का विस्तार कर रहा है। क्योंकि यशोदा नन्दन श्रीकृष्ण के चरण कमलों के चिह्नों से यह चिह्नित हो रहा है! सखि ! जब श्रीकृष्ण अपनी मुनिजन मोहिनी मुरली बजाते हैं, तब मोर मतवाले हो कर उसकी ताल पर नाचने लगते हैं। यह देख कर पर्वत की चोटियों पर विचर ने वाले सभी पशु-पक्षी चुप चाप शान्त हो कर खड़े रह जाते हैं। अरी सखी! जब प्राण वल्लभ श्रीकृष्ण विचित्र वेष धारण करके बाँसुरी बजाते हैं, तब मूढ़ बुद्धि वाली ये हरिनियाँ भी वंशी की तान सुन कर अपने पति कृष्ण सार मृगों के साथ नन्दनन्दन के पास चली आती हैं और अपनी प्रेमभरी बड़ी-बड़ी आँखो से उन्हें निरखने लगती हैं। निरखती क्या हैं, अपनी कमल के समान बड़ी-बड़ी आँखें श्रीकृष्ण के चरणों में निछावर कर देती है और श्रीकृष्ण की प्रेम भरी चितवन के द्वारा किया हुआ अपना सत्कार स्वीकार करती है। वास्तव में उनका जीवन धन्य है !

कृष्णं(न्) निरीक्ष्य वनितोत्सवरूपशीलं(म्),

श्रुत्वा च तत्क्वणितवेणुविचित्रगीतम् ।

देव्यो विमानगतयः(स्) स्मरनुन्नसारा,

भ्रश्यत्प्रसूनकबरा मुमुहुर्विनीव्यः ॥ 6॥

कृष्णम्– कृष्ण को; निरीक्ष्य– देखकर; वनिता- स्त्रियों के लिए; उत्सव– उत्सव; रूप– जिसका सौन्दर्य; शीलम्- तथा चरित्र; श्रुत्वा– सुनकर; च– तथा; तत्— उनसे; क्वणित– ध्वनित; वेणु- वंशी का; विविक्त– स्पष्ट; गीतम्— गीत; देव्यः- देवताओं की पत्नियाँ; विमान-गतयः- अपने विमानों में यात्रा करती; स्मर– कामदेव द्वारा; नुन्न– विचलित; साराः- जिनके हृदय; भ्रश्यत्—बिछलते हुए; प्रसून- कबराः- केश में बँधे फूल; मुमुहुः- मोहित हो गईं; विनीव्यः– उनकी पेटियाँ ढीले पड़ गये ।

अरी सखी। हरिनियों की तो बात ही क्या है- स्वर्ग की देवियाँ जब युवतियों को आनन्दित करने वाले सौन्दर्य और शील के खजाने श्रीकृष्ण को देखती हैं और बाँसुरी पर उनके द्वारा गाया हुआ मधुर संगीत सुनती हैं, तब उनके चित्र-विचित्र आलाप सुन कर वे अपने विमान पर ही सुध-बुध खो बैठती है मूर्च्छित हो जाती हैं। यह कैसे मालूम हुआ सखी? सुनो तो, जब उनके हृदय में श्रीकृष्ण से मिलने की तीव्र आकाङ्क्षा जग जाती है तब वे अपना धीरज खो बैठती हैं, बेहोश हो जाती हैं; उन्हें इस बात का भी पता नहीं चलता कि उनकी चोटियों में गुंथे हुए फूल पृथ्वी पर गिर रहे हैं। यहाँ तक कि उन्हें अपनी साड़ी का भी पता नहीं रहता, वह कमर से खिसक कर जमीन पर गिर जाती है।

गावश्च कृष्णमुखनिर्गतवेणुगीत-

पीयूषमुत्तभितकर्णपुटैः(फ्) पिबन्त्यः ।

शावाः(स्) स्रुतस्तनपयः(ख्)कवलाः(स्) स्म तस्थुर्-

गोविन्दमात्मनि दृशाश्रुकलाः(स्) स्पृशन्त्यः ॥ 7॥

गावः–गौवें; च—तथा; कृष्ण-मुख- कृष्ण के मुँह से; निर्गत— निकले; वेणु- वंशी के; गीत— गीत के; पीयूषम्— अमृत को; उत्तभित—ऊँचे उठाये हुए; कर्ण- कानों के; पुटैः– दोनों से; पिबन्त्यः– पीते हुए; शावाः– बछड़े; स्रुत– निकलता हुआ; स्तन– स्तनों से; पयः– दूध; कवलाः– कौर; स्म– निस्सन्देह; तस्थुः- शान्त खड़ी; गोविन्दम्– भगवान् कृष्ण को; आत्मनि—अपने मनों में; दृशा– अपनी दृष्टि से; अश्रु-कलाः- आँसुओं की झड़ी; स्पृशन्त्यः- छूते हुए ।

अरी सखी! तुम देवियों की बात क्या कह रही हो, इन गौओंको नहीं देखती ? जब हमारे कृष्ण प्यारे अपने मुख से बाँसुरी में स्वर भरते हैं और गौएँ उनका मधुर संगीत सुनती हैं, तब ये अपने दोनों कानों के दोने सम्हाल लेती हैं-खड़े कर लेती हैं और मानो उनसे अमृत पी रही हों, इस प्रकार उस सङ्गीत का रस लेने लगती हैं? ऐसा क्यों होता है सखी? अपने नेत्रों के द्वार से श्यामसुन्दर को हृदय में ले जाकर वे उन्हें वहीं विराज मान कर देती हैं और मन-ही-मन उनका आलिङ्गन करती हैं। देखती नहीं हो, उनके नेत्रों से आनन्द के आंसू छलकने लगते हैं और उनके बछड़े, बछड़ों की तो दशा ही निराली हो जाती है। यद्यपि गायों के थनों से अपने-आप दूध झरता रहता है, वे जब दूध पीते-पीते अचानक ही वंशीध्वनि सुनते हैं, तब मुँह में लिया हुआ दूध का घूँट न उगल पाते हैं और न निगल पाते हैं। उनके हृदय में भी होता है भगवान् का संस्पर्श और नेत्रों में छलकते होते हैं आनन्द के आँसू वे ज्यों-के-त्यों ठिठ के रह जाते हैं।

प्रायो बताम्ब विहगा मुनयो वनेऽस्मिन्,

कृष्णेक्षितं(न्) तदुदितं(ङ्) कलवेणुगीतम् ।

आरुह्य ये द्रुमभुजान् रुचिरप्रवालान्,

शृण्वन्त्यमीलितदृशो विगतान्यवाचः ॥ 8॥

प्रायः–लगभग; बत- निश्चय ही; अम्ब-हे माता; विहगाः- पक्षीगण; मुनयः– मुनिगण; वने– जंगल में; अस्मिन् -इस; कृष्ण-ईक्षितम्– कृष्ण का दर्शन करने के लिए; तत्-उदितम्— उनके द्वारा उत्पन्न; कल-वेणु-गीतम्- वंशीवादन से उत्पन्न मधुर ध्वनि; आरुह्य- उठकर; ये– जो; द्रुम-भुजान्-वृक्षों की शाखाओं को; रुचिर-प्रवालान्- सुन्दर लताओं से युक्त; शृण्वन्ति–सुनते हैं; मीलित-दृशः- अपनी आँखें बन्द करके; विगत-अन्य-वाचः- अन्य सारी ध्वनियाँ रोककर ।

अरी सखी! गोएँ और बछड़े तो हमारी घर को वस्तु हैं। उनकी बात तो जाने ही दो वृन्दावन के पक्षियों को तुम नहीं देखती हो ! उन्हें पक्षी कहना ही भूल है। सच पूछो तो उनमें से अधिकांश बड़े-बड़े ऋषि-मुनि हैं। वे वृन्दावन के सुन्दर सुन्दर वृक्षों की नयी और मनोहर कोंपलों वाली डालियों पर चुपचाप बैठ जाते है और आँखें बंद नहीं करते, निर्निमेष नयनों से श्रीकृष्ण की रूप-माधुरी तथा प्यारभरी चितवन देख-देख कर निहाल होते रहते हैं, तथा कानों से अन्य सब प्रकार के शब्दों को छोड़ कर केवल उन्हींकी मोहनी वाणी और वंश का त्रिभुवन मोहन सङ्गीत सुनते रहते हैं। मेरी प्यारी सखी उनका जीवन कितना धन्य है।

नद्यस्तदा तदुपधार्य मुकुन्दगीत-

मावर्तलक्षितमनोभवभग्नवेगाः ।

आलिं(ङ्)गनस्थगितमूर्मिभुजैर्मुरारेर्-

गृह्णन्ति पादयुगलं(ङ्) कमलोपहाराः ॥ 9॥

नद्यः–नदियाँ; तदा—तब; तत्— उसे; उपधार्य- अनुभव करके; मुकुन्द– कृष्ण के; गीतम्— वेणुगीत को; आवर्त- भँवरों से; लक्षित—प्रकट; मनः-भव- अपनी दाम्पत्य इच्छा से; भग्न– टूटी; वेगाः– धाराएँ; आलिङ्गन— उनके आलिंगन से; स्थगितम्— जड़ हुई; ऊर्मि-भुजैः– लहर रूपी भुजाओं से; मुरारेः- मुरारी के; गृह्णन्ति- पकड़ लेती हैं; पाद-युगलम्— दोनों चरणकमल; कमल-उपहाराः- कमल फूलों की भेंटें लेकर।

अरी सखी! देवता गौओ और पक्षियों की बात क्यों करती हो ? वे तो चेतन है। इन जड़ नदियों को नहीं देखती ? इनमें जो भँवर दीख रहे हैं, उनसे इनके हृदय में श्यामसुन्दर से मिलने की तीव्र आकांक्षा का पता चलता है? उसके वेग से ही तो इनका प्रवाह रुक गया है। इन्होंने भी प्रेम स्वरूप श्रीकृष्ण की सुन ली है। देखो देखो ये अपनी तरंगों के हाथों से उनके चरण पकड़ कर कमल के फूलों का उपहार चढ़ा रही हैं और उनका आलिङ्गन कर रही हैं, मानो उनके चरणों पर अपना हृदय ही निछावर कर रही है।

दृष्ट्वाऽऽतपे व्रजपशून् सह रामगोपैः(स्),

सं(ञ्)चारयन्तमनु वेणुमुदीरयन्तम् ।

प्रेमप्रवृद्ध उदितः(ख्) कुसुमावलीभिः(स्),

सख्युर्व्यधात् स्ववपुषाम्बुद आतपत्रम् ॥ 10॥

दृष्ट्वा—देखकर; आतपे- सूर्य की भरी गर्मी में; व्रज-पशून्– व्रज के पालतू पशु; सह-साथ- साथ; राम-गोपैः– बलराम तथा ग्वालों के; सञ्चारयन्तम्—चराते हुए; अनु– बारम्बार; वेणुम्– वंशी; उदीरयन्तम्– तेजी से बजाते हुए; प्रेम– प्रेमवश; प्रवृद्धः– बढ़ा हुआ; उदितः- उठकर; कुसुम-आवलीभिः- फूलों के समूहों से; सख्युः– अपने मित्रों के लिए; व्यधात्— बनाया; स्व-वपुषा– अपने ही शरीर से; अम्बुदः– बादल ने; आतपत्रम् — छाता ।

अरी सखी! ये नदियाँ तो हमारी पृथ्वी को, हमारे वृन्दावन को वस्तुएँ हैं; तनिक इन बादलों को भी देखो। जब ये देखते है कि ब्रजराज कुमार श्रीकृष्ण और बलराम जी ग्वालबालों के साथ धूप में गौएँ चरा रहे हैं और साथ साथ बाँसुरी भी बजाते जा रहे हैं, तब उनके हृदय में प्रेम उमड़ आता है। वे उनके ऊपर मँडराने लगते हैं और वे श्यामघन अपने सखा घनश्याम के ऊपर अपने शरीर को ही छाता बनाकर तान देते हैं। इतना ही नहीं सखी! वे जब उन पर नन्हीं-नन्हीं फूहियों की वर्षा करने लगते है, तब ऐसा जान पड़ता है कि वे उनके ऊपर सुन्दर-सुन्दर श्वेत कुसुम चढ़ा रहे हैं। नहीं सखी, उनके बहाने वे तो अपना जीवन ही निछावर कर देते हैं!

पूर्णाः(फ्) पुलिन्द्य उरुगायपदाब्जरागं-

श्रीकुं(ङ्)कुमेन दयितास्तनमण्डितेन ।

तद्दर्शनस्मररुजस्तृणरूषितेन,

लिम्पन्त्य आननकुचेषु जहुस्तदाधिम् ॥ 11॥

पूर्णाः- पूर्णतया संतुष्ट; पुलिन्द्यः– शबर जाति की स्त्रियाँ; उरुगाय- भगवान् कृष्ण के; पद-अब्ज- चरणकमलों से; राग- लाल रंग का; श्री-कुङ्कु मेन- दिव्य कुंकुम चूर्ण से; दयिता– अपनी प्रेयसी के; स्तन -वक्षस्थल; मण्डितेन– अलंकृत हुए; तत्—उसके; दर्शन– देखने से; स्मर– कामदेव का; रुजः- कष्ट

अनुभव करते हुए; तृण- घास के ऊपर; रूषितेन– अनुरक्त; लिम्पन्त्यः– पोतते हुए; आनन- मुख; कुचेषु - तथा स्तनों पर; जहुः- उन्होंने त्याग दिया; तत्— उस; आधिम्— मानसिक पीड़ा को ।

अरो भट्ट ! हम तो वृन्दावन की इन भीलनियों को हो धन्य और कृतकृत्य मानती है। ऐसा क्यों सखी ? इसलिये कि इसके हृदय में बड़ा प्रेम है। जब ये हमारे कृष्ण-प्यारे को देखती हैं, तब | इनके हृदय में भी उनसे मिलने की तीव्र आकाङ्क्षा जाग उठती है। इनके हृदय में भी प्रेम की व्याधि लग जाती है। उस समय ये क्या उपाय करती हैं, यह भी सुन लो हमारे प्रिय तम की प्रेयसी गोपियाँ अपने वक्षःस्थलों पर जो केसर लगाती हैं, वह श्यामसुन्दर के चरणों में लगी होती है और वे जय वृन्दावन के घास-पात पर चलते हैं, तब उनमें भी लग जाती है। ये सौभाग्यवती भीलनियाँ उन्हें उन तिनको पर से छुड़ा कर अपने स्तनों और मुखों पर मल लेती हैं और इस प्रकार अपने हृदय की प्रेम-पीड़ा शान्त करती हैं।

हन्तायमद्रिरबला हरिदासवर्यो,

यद् रामकृष्णचरणस्पर्शप्रमोदः ।

मानं(न्) तनोति सहगोगणयोस्तयोर्यत्,

पानीयसूयवसकन्दरकन्दमूलैः ॥ 12॥

हन्त—ओह; अयम् — यह; अद्रिः– पर्वत; अबला :- हे सखियो; हरि-दास-वर्यः- भगवान् के सेवकों में से सर्वश्रेष्ठ; यत्— चूँकि; राम-कृष्ण-चरण- कृष्ण तथा बलराम के चरणकमलों के; स्परश- स्पर्श से; प्रमोदः - हर्षित; मानम्- आदर; तनोति— प्रदान करता है; सह- साथ; गो-गणयोः– गौवें, बछड़े तथा ग्वालबाल के; तयोः– उन दोनों को; यत्—क्योंकि; पानीय– पेय जल के साथ; सूयवस- अत्यन्त मुलायम घास; कन्दर – गुफाएँ; कन्द-मूलैः- तथा खाद्य कन्दों से ।

अरी गोपियो ! यह गिरिराज गोवर्द्धन तो भगवान् के भक्तोंमें बहुत ही श्रेष्ठ है। धन्य है इसके भाग्य ! देखती नहीं हो, हमारे प्राण वल्लभ श्रीकृष्ण और नयनाभिराम बलराम के चरण कमलो का स्पर्श प्राप्त करके यह कितना आनन्दित रहता है। इसके भाग्य की सराहना कौन करे ? यह तो उन दोनों का ग्वालबालो और गौओं का बड़ा ही सत्कार करता है। खान-पान के लिये झरनो का जल देता है, गौओं के लिये सुन्दर हरी-हरी घास प्रस्तुत करता है विश्राम करने के लिये कन्दराएँ और खाने के लिये कन्द-मूल फल देता है। वास्तव में यह धन्य है !

गा गोपकैरनुवनं(न्) नयतोरुदार-

वेणुस्वनैः(ख्) कलपदैस्तनुभृत्सु सख्यः ।

अस्पन्दनं(ङ्) गतिमतां(म्) पुलकस्तरूणां(न्),

निर्योगपाशकृतलक्षणयोर्विचित्रम् ॥ 13॥

गाः–गौवें; गोपकैः– ग्वालबालों के साथ; अनु-वनम्- प्रत्येक जंगल तक; नयतोः– ले जानेवाले; उदार- अत्यन्त उदार; वेणु- स्वनैः- वंशी की ध्वनि से; कल-पदैः- मधुर स्वर से ; तनुभृत्सु– जीवों से; सख्यः- हे सखियो; अस्पन्दनम्– स्पन्दन का अभाव; गति-मताम्—गति करनेवाले जीवों का; पुलकः– हर्ष; तरुणम् – वृक्षों का; निर्योग-पाश– गौवों के पिछले पाँवों को बाँधने के लिए प्रयुक्त रस्सी, नोई; कृत-लक्षणयोः- लक्षणों वालों का; विचित्रम्- आश्चर्यजनक ।

अरी सखी! इन साँवरे गोरे किशोरों की तो गति ही निराली है। जब वे सिर पर नोवना लपेट कर और कंधों पर फंदा रख कर गायों को एक वन से दूसरे वन में कर ले जाते हैं. साथ मे ग्वालबाल भी होते हैं और मधुर-मधुर संगीत गाते हुए बाँसुरी को तान छेड़ते हैं, उस समय मनुष्यों की तो बात ही क्या, अन्य शरीर धारियों में भी चलने वाले चेतन पशु-पक्षी और जड़ नदीआदि तो स्थिर हो जाते हैं तथा अचल-वृक्षों को भी रोमाञ्च हो आता है। जादूभरी वंशी का और क्या चमत्कार सुनाऊँ?